'समस्त ज्ञान वेद में है'

मेघनाद साहा

मेरे पहले निबन्ध 'समस्त ज्ञान वेदों में है' से अनेक पाठक असन्तुष्ट हुए हैं। वे इस बात से रुष्ट हैं कि मैंने व्यर्थ ही वेदों के प्रति अपनी अनास्था व्यक्त की है। लेकिन उनका रुष्ट होना उचित नहीं है। इस निबन्ध को लिखने के पीछे एक व्यक्तिगत इतिहास है। बात लगभग 18 वर्ष पहले की है। मैं इंग्लैंड से पहली बार स्वदेश लौटा था। वैज्ञानिक जगत में उस समय कुछ-कुछ मेरे नाम की चर्चा थी। मेरे अपने शहर ढाका के रहने वाले एक प्रतिष्ठित वकील ने यह जानने की इच्छा व्यक्त की कि मैंने विज्ञान के क्षेत्र में क्या कार्य किया है। मैंने उत्साह में भर कर अपने उस समय के शोध (अर्थात सूर्य एवं नक्षत्रों की प्राकृतिक स्थिति को आयनन सिद्धान्त के माध्यम से किस प्रकार ठीक-ठीक समझा जा सकता है) के विषय में समझाया। वे थोड़ा रुक कर बोले, 'इसमें नई बात क्या है, यह सब तो वेदों में है'। मैंने नम्रता सहित विरोध किया, श्रीमान जी, ये सब बातें वेदों के किस भाग में वर्णित हैं, कृपा करके बताइए तो? 'वे बोले,' मैने स्वयं तो वेद पढ़े नहीं हैं, लेकिन यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि आपका आधुनिक विज्ञान जिन नवीन चीजों को जानने का दावा करता है वह सभी कुछ वेदों में पहले से ही वर्णित है। इन सज्जन ने विश्वविद्यालय परीक्षा उच्चतम सम्मान के साथ उत्तीर्ण की थी।

कहने का अर्थ है कि गत बीस वर्षों से वेद, उपनिषद, पुराण इत्यादि समस्त हिन्दू शास्त्रों और ज्योतिष व विज्ञान सम्बन्धी अन्य प्राचीन ग्रन्थ इत्यादि का पन्ना-पन्ना पढ़ जाने पर भी मैं नहीं जान सका कि समस्त प्राचीन ग्रन्थों में वर्तमान आधुनिक विज्ञान के मूल तत्व की जानकारी किस स्थान पर है? समस्त प्राचीन देशों के विद्वान विश्व में पृथ्वी की स्थिति, चन्द्र, सूर्य, ग्रह गति, रसायन विद्या, प्राणी विद्या इत्यादि के विषय में भिन्न-भिन्न प्रकार की बातें कह गये हैं। यह सत्य होते हुए भी, वास्तव में आधुनिक विज्ञान जगत तीन शताब्दियों से यूरोपीय विद्वानों के सामूहिक शोध, विचार शक्ति और परिश्रम का फल है। ग्यारहवीं शताब्दी में भास्कराचार्य ने बहुत ही अस्पष्ट रूप से गुरुत्वाकर्षण शक्ति का उल्लेख किया था तो क्या इसकी तुलना न्यूटन से करना ठीक होगा? वे इसी से कहते हैं कि न्यूटन ने नया क्या किया? ज्ञान का अभाव कितना हानिकारक हो सकता है, इसी से समझा जा सकता है। भास्कराचार्य ने कहीं भी यह नहीं कहा है कि पृथ्वी तथा अन्य ग्रह सूर्य के चारों ओर अण्डाकार मार्ग (ईलीप्टीकल पाथ) में घूम रहे हैं। उन्होंने कहीं भी गुरूत्वाकर्षण शक्ति तथा गति के नियमों द्वारा यह सिद्ध नहीं किया है, पृथ्वी व अन्य ग्रह किस प्रकार अपने-अपने कक्ष में भ्रमण कर रहे हैं। अत: यह कहना कि भास्कराचार्य अथवा हिन्दू, अरबी या ग्रीक विद्वानों ने केपलर, गैलीलियो या न्यूटन के पहले ही गुरुत्वाकर्षण की खोज कर ली थी- एक पागल का प्रलाप ही होगा। दुख की बात है कि हमारे देश में विज्ञान का विकृत रूप में प्रचार करने वाले लोगों का अभाव नहीं है। ये लोग 'सत्य' के नाम पर केवल झूठ का ही प्रचार किया करते है।

वेदों में क्या है?

उस घटना के समय अर्थात अठारह वर्ष पहले मैंने वेद नहीं पढ़े थे। वेद कहने से मैं अभी तक ऋग्वेद को ही वेद समझता था। बाद में अंग्रेजी तथा बंगाली में अनुदित ऋग्वेद संहिता को पढ़ा है, क्योंकि मूल वैदिक संस्कृत को पढ़ना सहज नहीं है और अगर मूल संस्कृत में पढ़ा भी जाए तो इसका कोई विशेष लाभ नहीं है, क्योंकि ऋग्वेद आचार्य पाणिनि के समय से ही (छठी एवं पांचवीं शताब्दी) समझ पाना कठिन था। ईस्वी सन की चौदहवीं शताब्दी में आचार्य शायन ने इसे समझने का प्रयास किया था (शायन भाष्य)। यूरोपीय विद्वानों ने वेदों का संग्रह कर इन्हें अनुदित किया तथा इनके कठिन अंशों को समझने की सामूहिक रूप से चेष्ठा की लेकिन उनकी इस चेष्ठा से भी अधिकांश अंशों के अर्थ स्पष्ट न हो सके। ऐसा होने के अनेक कारण हैं- एक मुख्य कारण यह है कि वेदों के भिन्न-भिन्न अंशों की रचना अति प्राचीन काल में हुई तथा जिस समय में, जिस देश में तथा जिस वातावरण में और जिस वर्ग के लोगों ने इनकी रचना की, बाद के समय में लोग उन्हें पूरी तरह भूल गये। अत: इस विषय में ज्ञान को पृष्ठभूमि के अभाव में इन ग्रन्थों का मूल अर्थ करना कठिन कार्य है। इसी लिए बाद के काल में इनका अर्थ कल्पना के सहारे नहीं हो सकता। सबसे पहले यह जानने की आवश्यकता है कि वेद किस काल में रचे गये? वेदों में अनेक ज्योतिषीय घटनाओं का उल्लेख है। इन सभी घटनाओं का समय निर्धारित करना कठिन नहीं है। प्रोफेसर जैको बी. शंकर, बाल कृष्ण दीक्षित, प्रबोध चन्द सेनगुप्त तथा बाल गंगाधर तिलक आदि स्वदेशी तथा विदेशी विद्वानों ने इन सभी ज्योतिषीय उल्लेखों की वैज्ञानिक आलोचना करते हुए वेदों के उपरोक्त अंशो का समय निर्धारित करने का प्रयास किया है। सभी लेखों से प्रमाणित होता है कि वेदों में वर्णित इन ज्योतिषीय घटनाओं का समय 4000 ईसा पूर्व से पहले नहीं हो सकता। अनेक विद्वानों का विचार है कि वेदों के विभिन्न अंशों का संकलन अथवा रचना काल सन 2500 ईसा पूर्व से 4000 ईसा पूर्व के बीच का काल है। इससे पूर्व की घटनाएं श्रुति मात्र हैं। जिस प्रकार इस देश में वर्तमान में प्रचलित पंचांग में अश्विनि नक्षत्र को नक्षत्र पुंज का आदि माना गया है। 'मानसिक जड़ता के कारण वर्तमान पंचांग रचयिता 1434 वर्ष पूर्व की ज्योतिषीय घटनाओं को भी वर्तमान घटनाएं बताकर प्रचारित कर रहे हैं। अनेक सुविज्ञ लेखकों के अनुसार वेदों के प्राचीनतम अंशों के वास्तविक संकलन काल से लगभग 1000 वर्ष पहले तक वे श्रुति के रूप में चले आते थे। यह होने पर भी यूरोपीय विद्वान वेदों के प्राचीनतम अंशों को 2500 ईसा पूर्व तक का मानने में कोई विशेष आपत्ति नहीं करते। अनेक प्रमाणों से सिद्ध हो जाता है कि मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा में जो भारतीय सभ्यता की छाप मिलती है, वह भी 2500 ईसा पूर्व अथवा एक दो शताब्दी आगे या पीछे की मानी जा सकती है।

ऋग्वेद संहिता की रचना 2500 ईसा पूर्व में आरंभ हुई। संहिता में जिस प्रकार से समाज का चित्रण मिलता है, उससे कहीं उच्च-स्तर के समाज (मिस्र, ईरान तथा सम्भवत: भारत भी इसी पृथ्वी के अनेक भागों में विद्यमान थे। ऋग्वेद में वर्णित नदियों से संकेत मिलता है कि प्राचीनतम आर्य वर्तमान पंजाब के उत्तर-पश्चिमी भाग तथा वर्तमान अफगानिस्तान के पूर्वी भागों में बसे हुए थे। ये लोग अक्सर सिंधु नदी की घाटी के बाशिन्दों पर आक्रमण करते रहे।

दिवंगत लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने अपने एक लेख में दर्शाया है कि अथर्व वेद में अनेक शब्द और श्लोक ऐसे हैं जिनका कोई ठीक अर्थ कर पाना किसी के लिये भी सम्भव नही हुआ है। लेकिन यदि यह मान लिया जाए कि ये सभी शब्द बेबिलोन में प्रचलित पौराणिक कहानियों से लिये गए हैं तो उन शब्दों और श्लोकों का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। यदि यह भी मान लिया जाए कि अथर्व वेद की रचना 1500-1600 ईसा पूर्व के काल में हुई, तो तिलक के लेखों से प्रमाणित हो जाता है कि उस समय भारत और बेबिलोन के बीच संपर्क था। इसी प्रकार विचार करने पर हम ऋग्वेद के अनेक कठिन अशों को भी समझ पाते है। ऋग्वेद ऋषियों द्वारा रचित ऐसे स्त्रोतों का संग्रह मात्र है जिसमें सूर्य, चन्दमा जैसे प्राकृतिक देवताओं तथा इन्द्र, वरुण, मित्र इत्यादि अन्य देवताओं की महिमा का गुणगान है। अनेक विद्वानो के अनुसार मित्र, वरुण, विष्णु इत्यादि देवता सूर्य के प्रतीक हैं। किन्तु ग्रह, नक्षत्र इत्यादि प्राकृतिक-शक्तियों को देवता मानकर उनकी

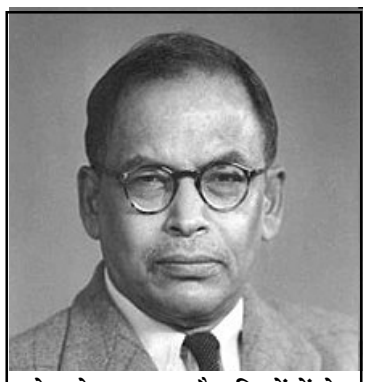

देश के महानतम वैज्ञानिकों में से एक मेघनाद साहा का यह लेख आज और भी संगत है

स्तुति करना आर्यो का ही मौलिक आविष्कार न था। वैदिक सभ्यता की समकालीन मिस्री, सुमेरियन इत्यादि सभ्यताओं तथा सभी प्राचीन सभ्यताओं में किसी न किसी समय से ऐसे परम्पराओं का प्रचलन पाया जाता है। प्राचीन मिस्री लोग सूर्य को प्रधान देवता एवं सृष्टिकर्ता के रूप में मानते थे। साइरम (Sirim) लोग ब्रह्माण्ड में श्रेष्ठ माने जाने वाले लुब्धक नक्षत्र को आइसिस देवी के रूप में मानते थे। प्राचीन सुमेर निवासियों के अधिकतर देवता ग्रह-नक्षत्र मूलक ही थे।

इन सभी देवताओं तथा अन्य समुद्र, नदी या पर्वत देवताओं को लेकर सुमेरियन कवियों तथा ऋषियों ने जिन समस्त स्तोत्रों (छन्दबद्ध देवताओं की स्तुति) की रचना की थी उनके कई अंश वर्तमान में खोज निकाले गये हैं। इन्हें ब्रिटिश म्यूजियम में रखा गया है। सुमेरियन पुरातत्व विभाग के उपनिदेशक डॉ. गौड़ ने इनका अनुवाद करके प्रकाशित भी कराया है। इजीप्शियन बुक ऑफ डेड नामक ग्रन्थ में मिस्री देवताओं की उपासना के लिये रचित श्लोकों का संग्रह किया गया है। सुप्रसिद्ध एवं दिवंगत अमरीकी पुरातत्ववेत्ता प्रोफेसर ब्रेस्ट ने अपनी पुस्तक Dawn of conscience in the world में सिद्ध किया है कि बाइबल में जिसे यीशु की आध्यात्मिक वाणी कहकर प्रचार किया गया है, उसका अधिकाशं भाग, यहाँ तक कि अक्षर भी प्राचीन बेबिलोनियाई व मिसी शास्त्रों इत्यादि से उधार लिये गये है। अर्थात वास्तव में 4000 ई. पू. 600 ई.पू. काल में दो प्राचीन सभ्य जातियों ने अपने हजारों वर्षों के अनुभवों के फलस्वरूप जिस आध्यात्मिक तत्व को पाया था. वही आगे चलकर बाद के काल में ईसाई धर्म का आध्यात्मिक आधार बना। किन्तु ईसाई व अन्य धर्मावलम्बियों ने ग्रह, नक्षत्रों, बहु देवी-देवताओं को देवता मानने का कोई औचित्य न समझकर इस परम्परा को छोड़ दिया। बाद के दो हजार वर्षों का इतिहास यह प्रमाणित करता है कि आध्यात्मिकता को प्रतिष्ठित करने के लिए बहु देवी-देवताओं की उपासना करना आवश्यक नहीं हैं।

वेद तथा परवर्तीकाल के शास्त्रों आदि का गहराई से अध्ययन करने पर उपरोक्त बात ही ठीक प्रतीत होगी। मोहनजोदड़ो के समय (2500 ई.पू.) तथा अशोक समय (300 ई.पू.) के बीच का इतिहास लिखने के लिए जिस सामग्री (उपादानों) की आवश्यकता है, वह आज तक भी उपलब्ध नहीं है। यही वह समय था जब भारतीय ध सभ्यता के मूल तत्वों का आविष्कार और गठन 3/4 भारतीय धर्म, समाज और सभ्यता का गठन वैदिक सभ्यता तथा प्राक-वैदिक भारतीय सभ्यताओं की दो अथवा तीन धाराओं के सम्मिलन के परिणामस्वरूप हुआ। बाद के समय में (अर्थात 300 ईसा पूर्व या और भी बाद में) रामायण, महाभारत, पुराण इत्यादि रचनाओं में इन्हीं 2200 वर्षों की घटनाओं को अस्पष्ट सी श्रुति के रूप में पाया जा सकता है। वैदिक आर्य लोग जब भारत में आये तब उनके द्वारा किये जाने वाले यज्ञ अनुष्ठानों को लेकर तरह-तरह के प्रश्न उठने लगे। उपनिषदों में इसी संदिग्ध मनोभावना की झलक मिलती है। उपनिषदों की आध्यात्मिकता का आधार ब्रह्मवाद है। इसी से वैदिक देवताओं की मान्यता नहीं थी।

बौद्ध एवं जैनियों ने वेदों को एकदम नकार कर अपने-अपने धर्मों का गठन किया। लेकिन जिन शास्त्रों व दर्शनों को पक्का सनातनी कहा जाता है, वे भी अधिकतर वेद विरोधी हैं। सांख्य दर्शन की आलोचना करते हुए बंकिम चन्द्र ने कहा है, 'सांख्य' में वेदों को कही भी अस्वीकृत नहीं किया गया है। वैदिकता का पर्याप्त आडम्बर है, किन्तु सांख्य के प्रवचनकार वेदों की दुहाई देते हुए उसी को अस्वीकार कर गये।

वेदों की उत्पति के विषय में अनेक हिन्दू शास्त्रों की सभी धारणाओं का उल्लेख बंकिम चन्द्र ने 'विविध प्रबंध' के पांचवें अध्याय में किया है। जिज्ञासु पाठक पढ़कर देखें। इन समस्त धारणाओं पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है। कि वेदों की रचना के समय में यही धारणा प्रबल थी कि 'वेद ईश्वर की मूल वाणी' हैं। प्राचीन काल में शास्त्र और ग्रन्थों से वेदों की उत्पति के विषय में कई प्रकार की विचित्र व अस्पष्ट धारणाएं भी प्रचलित थी। लेकिन वेदों के 'ईश्वर की मूल वाणी' होने को सिद्ध करने का कोई प्रयास नहीं किया गया था।

प्रश्न उठता है कि वेदों के इतने रूप क्यों है? जहाँ वेद मत का विरोध है, वहाँ वेदों की दुहाई भी है। प्रश्न का उत्तर एक अन्य धर्म का उल्लेख करके दिया जा सकता है। वह धर्म है इस्लाम। यह धर्म कुरान पर आधारित है। कहा जाता है कि हजरत मुहम्मद ने ईश्वर का आदेश सुना, उनके शिष्यों ने सुनकर लिपिबद्ध कर दिया। इसी संग्रह को कुरान माना जाता है, लेकिन हजरत मुहम्मद की मृत्यु के बीस वर्ष के अन्दर-अन्दर ही विशाल इस्लाम जगत के विभिन्न भागों में कुरान की तरह-तरह की प्रतियां और पाठ प्रचलित हो गये। खलीफा उस्मान ने जब यह देखा तो उन्हें समझते देर न लगी कि शीघ्र ही अनेक इस्लाम धर्म अस्तित्व में आ जायेंगे। इसके प्रतिकार के लिए उन्होंने एक उपाय ढूंढ निकाला। हजरत मुहम्मद के जितने भी शिष्य व संगी साथी थे, उन सब की एक सभा बुलायी गई तथा विभिन्न देशों में जितने भी प्रकार के अलग-अलग कुरानें थी, उनमें से किस-किस में हजरत मुहम्मद के मुख से निकली वाणी का संकलन था, इस विषय में वही पर साक्ष्य संग्रह किया गया। इस प्रकार लम्बे समय के उधम के बाद जिन सब रचनाओं में हजरत मुहम्मद की वाणी थी उन सबको नये सिरे से लिखकर मूल कुरान की पाण्डुलिपि तैयार की गई तथा नियम बना दिया गया कि यदि भविष्य में कुरान की किसी प्रति में कोई त्रुटि होगी तो उसे अशुद्ध माना जायेगा। इसी, कठोर नियम के कारण विगत 14 शताब्दियों से लेकर आज तक विशाल इस्लाम जगत में कहीं भी कुरान के मुल स्वरूप में परिवर्तन होना संभव नहीं हुआ।

लेकिन ऐसे कठोर नियमों के होते हुए भी इस्लाम धर्म के विभिन्न सम्प्रदाय अस्तित्व में आ गये। अध्यापक ताराचंद के अनुसार इस्लाम में विभिन्न सम्प्रदायों का अस्तित्व है । ये सभी सम्प्रदाय (जैसे शिया सुन्नी) ऊपर - ऊपर से कुरान को हजरत मुहमद की मूल वाणी के रूप में स्वीकार करते हैं, लेकिन इस पर भी सम्प्रदायों के धर्म विश्वास व आचार-व्यवहार में पर्याप्त समय से आकाश-पाताल का अन्तर है। इन सब सम्प्रदायों में मोतजील सम्प्रदाय कट्टर युक्तिवादी है। इस सम्प्रदाय के लोग सुकरात, प्लेटो, अरस्तू जैसे प्राचीन युनानी युक्तिवादी दार्शनिकों के विचारों को मान्यता देते हैं। एक अन्य सम्प्रदाय है आगाखानी सम्प्रदाय जो भारतीयों के अनुरूप ही अवतारवाद व पुर्नजीवनवाद में विश्वास रखता है। इस पर भी ये सभी सम्प्रदाय धर्म में आस्था रखने वाले हैं। इसका कारण है कि इस्लाम धर्म अल्प समय में ही सीरिया, ईराक, मध्येशिया इत्यादि अनेक देशों में प्रचलित हो गया था। इन सभी देशों के निवासी इस्लाम धर्म में दीक्षित हो जाने पर भी वास्तव में स्वदेश प्रचलित पुराने धर्म विश्वास को एक झटके से नहीं छोड़ पाये। राज्य शक्ति इस्लाम धर्मावलम्बियों के हाथों में होने से, ये लोग उनके विरूद्ध आवाज उठाने का साहस नहीं कर सके। अत: ऊपर-ऊपर से कुरान को मान्यता देते हुए वास्तव में इन लोगों ने कुरान विरूद्ध आचरण करते हुए भी कट्टर मुसलमानों की भाँति इस्लाम धर्म का विस्तार किया।

वेदों के 'ईश्वर की मूल वाणी' होने के विषय में यही तर्क कार्य करेगा। जब 2500 ईसा पूर्व (या कुछ आगे-पीछे) में वैदिक आर्य लोगों ने समस्त उत्तर भारत को अपने अधिकार में ले लिया तब उनके नेता, पुरोहित (ऋषि), राजपुरूषों ने यज्ञ अनुष्ठानों का खूब आडम्बर किया। यज्ञ अनुष्ठान करते समय वे अपने उपास्य देवी-देवताओं को प्रसन्न करने हेतु स्तुतिगान भी करते थे तथा पशु बलि देते थे। पाणिनि से पूर्व ही ये सब स्तोत्र इत्यादि गणित तथा मन्नादि में बंट गये थे। लेकिन उपनिषदों का युग होने के कारण विचारशील ऋषिगण वैदिक यज्ञादि की आध्यात्मिकता के प्रति संदिग्ध थे। प्राक-वैदिक भारतीय सभ्यता में जिन लोगों की धार्मिक आस्था थी (सम्भवत: पाशुपति धर्म और नारायणी धर्म) उन्होंने बाद में अन्य उपायों से अपने धर्म को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। देश में राज्य शक्ति और पुरोहित शक्ति का वैदिक कर्मकाण्डों में प्रगाढ विश्वास था।

अत: इनका विरोध करके अपने मत का प्रचार करने का साहस इन लोगों में (प्राचीन धर्मावलम्बियों में) नहीं था। फलस्वरूप ये लोग वेदों के अस्पष्ट सूत्रों की दुहाई देकर अपने धर्म की जड़ें जमाये रखने की चेष्ठा करते रहे। इसी से प्राक-वैदिक शिव, पशुपति देवता तथा वेदों में वर्णित अमंगलकारी रूद्र देवता कालांतर में एक होकर वेदों के सौर्य देवता तथा नारायणी धर्म के विष्णु देवता को एक कर देने का भी प्रयास हुआ। पाशुपति और नारायणी धर्मावलम्बियों ने इसी प्रकार वेदों की दुहाई देते हुए अवैदिक क्रियाकलाप जारी रखे। बौद्ध व जैन धर्मालम्बी वैदिक धार्मिक विश्वास से संतुष्ट नहीं हुए। बौद्धों व जैनियों ने इस पद्धति का अनुसरण नहीं किया। उन्होंने वेदों के ईश्वरीय होने की बात को मानने से इन्कार कर दिया तथा वैदिक कर्मकाण्डों को एकदम निरर्थक माना ।

इस लेखक ने तटस्थ वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हिन्दुओं के वेदों तथा अन्य धर्मों के मूल तत्व को समझने की चेष्ठा की है। इस प्रकार इसकी अवहेलना करने या इसे अस्वीकार कर देने का प्रश्न ही नहीं उठता। लेखक का विश्वास है कि प्राचीन धर्म ग्रंथ जिन सब विश्व तथ्यों, परिघटनाओं ऐतिहासिक ज्ञान तथा मानव-चरित्र की जिस जानकारी पर आधारित हैं, वर्तमान युग की उपयोगी 'आध्यात्मिकता' का आधार का ज्ञान नहीं हो सकता। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर आज युग के लिए उपयोगी 'आध्यात्मिकता' किस प्रकार प्रतिष्ठित हो सकेगी, लेखक ने इसका सविस्तार वर्णन कर दिया है।

''धार्मिक दृष्टिकोण के आधार पर विश्व के किसी भी भाग में एक आन्दोलन हो सकता है। किन्तु ऐसा प्रतीत नहीं होता कि इससे कोई बहुमुखी विकास होगा। जीवन हम सबको प्रिय है और हम सब जीवन की पहेलियों को अनावृत करने को उत्सुक हैं। प्राचीन काल मे विज्ञान की सीमाबद्धताओं के फलस्वरूप एक कल्पित ईश्वर के चरणों में दया की भीख माँगने के सिवा हमारे पास कोई दुसरा रास्ता नहीं था, जिसे प्रकृति के रहस्यमय नियमों का नियन्ता माना गया। प्राक वैज्ञानिक युगीन मानव ने अपने को अत्यंत असहाय महसूस किया और धर्म का आर्विभाव शायद इसी मानसिकता से हो सका। प्रकृति सम्बन्धी विचार प्राचीन धर्मों मे शायद ही सुपरिभाषित हैं। इसके अतिरिक्त इनकी प्रकृति 4/ 4 है, अत: आधुनिक युग की मांगो की पूर्ति नहीं कर सकते।''